पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

डॉ. दिलीप कुमार उर्फ डॉ. दिलीप कुमार शर्मा उर्फ दिलीप शर्मा

बनाम

बिहार राज्य एवं एक अन्य

(2016 का आपराधिक विविध संख्या 6740)

22.11.2024

(माननीय न्यायमूर्ति श्री आशुतोष कुमार,

माननीय न्यायमूर्ति श्री मोहित कुमार शाह

एवं माननीय न्यायमूर्ति श्री हरीश कुमार)

विचार के लिए मुद्दा

क्या धारा 125 सीआरपीसी के दूसरे प्रावधान के तहत अंतरिम भरण-पोषण देने वाला आदेश एक "मध्यवर्ती आदेश" है और इसलिए गैर-संशोधन योग्य है, या क्या यह परिवार न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 19(4) के तहत संशोधन योग्य "मध्यवर्ती/अर्ध-अंतिम आदेश" के रूप में योग्य है।

हेडनोट्स

दंड प्रक्रिया संहिता – धारा 125 (दूसरा परंतुक) – अंतरिम भरण-पोषण – आदेश की प्रकृति – अन्तरवर्ती नहीं –

न्यायालय ने कहा कि धारा 125 सीआरपीसी के दूसरे प्रावधान के तहत अंतरिम भरण-पोषण देने वाला आदेश केवल एक अंतरिम आदेश नहीं है। यह पक्षों के अधिकारों और दायित्वों को काफी हद तक प्रभावित करता है, अंतरिम भरण-पोषण के मुद्दे पर अंतिम होता है, और इस प्रकार यह एक "मध्यवर्ती" या "अर्ध-अंतिम" आदेश के रूप में योग्य है।

[पैरा 30, 36, 37, 45]

पारिवारिक न्यायालय अधिनियम, 1984 – धारा 19(4) – उच्च न्यायालय का पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार – अंतरिम भरण-पोषण आदेश के विरुद्ध अनुरक्षणीय –

माना गया कि धारा 19(4) पारिवारिक न्यायालय द्वारा CrPC के अध्याय IX के तहत पारित किसी भी गैर-मध्यवर्ती आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय को पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार प्रदान करती है। चूँकि अंतरिम भरण-पोषण अंतरिम नहीं है, इसलिए पुनरीक्षण स्वीकार्य है।

[पैरा 28, 45–46]

भारतीय संविधान – अनुच्छेद 227 – जहां पारिवारिक न्यायालय अधिनियम के तहत वैधानिक संशोधन उपलब्ध है, वहां आह्वान अनावश्यक है –

न्यायालय ने कहा कि पारिवारिक न्यायालय अधिनियम की धारा 19(4) के तहत वैधानिक उपाय उपलब्ध कराए जाने के मद्देनजर संविधान के अनुच्छेद 227 या सीआरपीसी की धारा 482 को लागू करने की आवश्यकता नहीं है।

[पैरा 43, 44]

दंड प्रक्रिया संहिता – धारा 482 के अंतर्गत निहित शक्तियां – संयमित रूप से प्रयोग किया जाना –

न्यायालय ने कहा कि धारा 482 के तहत निहित शक्तियां दुर्लभ और असाधारण मामलों के लिए आरक्षित हैं। जब पारिवारिक न्यायालय अधिनियम के तहत पुनरीक्षण उपलब्ध हो, तो धारा 482 का सहारा लेने से मना किया जाता है।

[पैरा 7, 26, 43]

न्यायिक अनुशासन - मोहम्मद अकील अहमद (2016) (4) पीएलजेआर 968 - खारिज -

मो. अकील अहमद बनाम बिहार राज्य , 2016 (4) पीएलजेआर 968 में लिए गए दृष्टिकोण , जिसमें अंतरिम भरण-पोषण आदेशों को अन्तरवर्ती माना गया

था और धारा 19(4) के तहत संशोधन पर रोक लगाई गई थी, को खारिज किया जाता है।

[पैरा 5–6, 42, 46]

न्याय दृष्टान्त

एशियन रीसर्फेसिंग ऑफ रोड एजेंसी प्राइवेट लिमिटेड बनाम सीबीआई, **2018 (2)** पीएलजेआर **329** (एससी) – [पैरा 7]; सावित्री बनाम गोविंद सिंह रावत, **(1985) 4** एससीसी **337** - [पैरा **16**]; शाह बाबूलाल खिमजी बनाम जयाबेन डी. कानिया, **(1981) 4** एससीसी **8** - [पैरा **32-34**]; मधु लिमये बनाम महाराष्ट्र राज्य , **(1977) 4** एससीसी **551** - [पैरा **38**]; वीसी शुक्ला बनाम राज्य, **1980 (2)** एससीआर **380** - [पैरा **39**]; आकांक्षा श्रीवास्तव बनाम वीरेंद्र श्रीवास्तव, **2010 (3)** एमपीएलजे **151** - [पैरा **36**]; किरण बाला श्रीवास्तव बनाम जय प्रकाश श्रीवास्तव, **2005 (23)** एलसीडी **1** - [पैरा **35**]; अमर नाथ बनाम हरियाणा राज्य, **(1977) 4** एससीसी **137** - [पैरा **36**]; मोहम्मद अकील अहमद बनाम बिहार राज्य, **2016 (4)** पीएलजेआर **968** - खारिज - [पैरा **5, 42, 46**]

अधिनियमों की सूची

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973; पारिवारिक न्यायालय अधिनियम, 1984; भारत का संविधान

मुख्य शब्दों की सूची

धारा 125 सीआरपीसी; दूसरा प्रावधान; अंतरिम भरण-पोषण; अंतरिम आदेश; मध्यवर्ती आदेश; पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार; धारा 19(4); अनुच्छेद 227 संविधान; धारा 482 सीआरपीसी; मोहम्मद अकील अहमद का फैसला खारिज

प्रकरण से उत्पन्न

प्रधान न्यायाधीश, परिवार न्यायालय, मुंगेर द्वारा भरण-पोषण वाद संख्या 153/2014 में दिनांक 21.01.2016 को पारित आदेश के तहत याचिकाकर्ता की

पत्नी एवं बच्चों को ₹15,000/- प्रतिमाह का अंतरिम भरण-पोषण एवं ₹10,000/- का व्यय प्रदान किया गया।

पक्षकारों की ओर से उपस्थिति

याचिकाकर्ता के लिए:श्री अंसुल, अधिवक्ता (एमिकस); श्री राजेश कुमार सिंह, वरिष्ठ अधिवक्ता (एमिकस); सुश्री सोनी श्रीवास्तव, अधिवक्ता (एमिकस)

राज्य के लिए: श्री परमेश्वर मेहता, ए.पी.पी.; श्री चौबे जवाहर, एपीपी

रिपोर्टर द्वारा हेडनोट बनाया गया:- सुश्री आकांक्षा मालवीय, अधिवक्ता

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

2016 का आपराधिक विविध संख्या 6740

==========

डॉ. दिलीप कुमार उर्फ़ डॉ. दिलीप कुमार शर्मा उर्फ़ दिलीप शर्मा, पिता स्व शिव पूजन प्रसाद, निवासी-केशोपुर गुरुद्वारा रोड, थाना-जमालपुर, जिला-मुंगेर।

....**याचिकाकर्ता**

बनाम

1. बिहार राज्य
2. स्वाति ओमी, पति- डॉ. दिलीप कुमार शर्मा उर्फ डॉ. दिलीप कुमार, छोटी केलावारी आनंद लेन, थाना-कोतवाली, जिला-मुंगेर

... ...**विपक्षी पक्ष**

==========

उपस्थिति:

याचिकाकर्ता/ओं की ओर से	:	श्री अंसुल, अधिवक्ता (न्यायमित्र)
		श्री राजेश कुमार सिंह, वरिष्ठ अधिवक्ता (न्यायमित्र)
		सुश्री सोनी श्रीवास्तव, अधिवक्ता (न्यायमित्र)

राज्य की ओर से : श्री परमेश्वर मेहता, अ.लो.अ
श्री चौबे जवाहर, अ.लो.अ

==========

कोरम: माननीय न्यायमूर्ति श्री आशुतोष कुमार
और
माननीय न्यायमूर्ति श्री मोहित कुमार शाह
और
माननीय न्यायमूर्ति श्री हरीश कुमार
सी.ए.वी. निर्णय
(द्वारा: माननीय न्यायमूर्ति श्री आशुतोष कुमार)
दिनांक: 22-11-2024

डॉ. दिलीप कुमार उर्फ डॉ. दिलीप कुमार शर्मा उर्फ दिलीप शर्मा के वैवाहिक विवाद के मामले में, प्रधान न्यायाधीश, पारिवारिक न्यायालय, मुंगेर ने भरण-पोषण वाद संख्या 153/2014 में उन्हें अपनी पत्नी/विपरीत पक्ष संख्या 2 तथा अपने बच्चों को अंतरिम भरण-पोषण के रूप में 15,000/- रुपये प्रतिमाह देने का निर्देश दिया। इसके अलावा खर्च के रूप में 10,000/- रुपये एकमुश्त तथा मुकदमेबाजी के आवर्ती खर्च के रूप में कार्यवाही की प्रत्येक तिथि के लिए 1,000/- रुपये देने का भी निर्देश दिया गया।

2. डॉ. दिलीप कुमार ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में द.प्र.स) की धारा 482 के तहत पारिवारिक न्यायालय द्वारा पारित उपरोक्त आदेश को चुनौती दी।

3. इस न्यायालय की खंडपीठ के ***मो. अकील अहमद बनाम बिहार राज्य एवं अन्य: 2016 (4) पीएलजेआर 968*** के निर्णय के आधार पर विपक्षी पक्ष संख्या 2 द्वारा पोषणीयता का प्रश्न उठाया गया था।

4. उपर्युक्त निर्णय में, पारिवारिक न्यायालय अधिनियम, 1984 (संक्षेप में 1984 का अधिनियम) की योजना और द.प्र.स के अध्याय IX में

निहित प्रावधानों पर विचार करने के बाद, खंडपीठ ने निर्णायक रूप से माना था कि 1984 के अधिनियम की धारा 10 और 20 के संयुक्त वाचन से, धारा 482 द.प्र.स के तहत उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति को धारा 125 द.प्र.स के तहत अंतरिम भरण-पोषण देने के आदेश के खिलाफ लागू नहीं किया जा सकता है, क्योंकि द.प्र.स के प्रावधानों की प्रयोज्यता केवल संहिता के अध्याय IX की कार्यवाही के तहत पारिवारिक न्यायालयों के समक्ष ही सीमित है। इसने यह भी माना कि चूंकि अंतरिम भरण-पोषण देने वाला आदेश एक अंतरिम आदेश है, इसलिए 1984 के अधिनियम की धारा 19 (4) के तहत ऐसे आदेश के खिलाफ कोई चुनौती नहीं दी जा सकती।

5. इस न्यायालय की खंडपीठ ने इस निष्कर्ष पर पहुँचते हुए कहा कि धारा 125 द.प्र.स के दूसरे प्रावधान के तहत अंतरिम भरण-पोषण के आदेश के खिलाफ पीड़ित पक्ष के लिए उपलब्ध एकमात्र उपाय भारतीय संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत आवेदन करना होगा, किसी अन्य मंच के तहत नहीं।

6. विद्वान एकल न्यायाधीश ने खंडपीठ की इस राय को समान शक्ति वाली खंडपीठ के अन्य निर्णयों के साथ विरोधाभासी पाते हुए, मामले को मुख्य न्यायाधीश के पास भेज दिया ताकि ***मोहम्मद अकील अहमद*** के मामले **(ऊपर)** में शामिल मुद्दों पर पुनर्विचार के लिए खंडपीठ का गठन किया जा सके।

7. ऐसा कहते हुए, विद्वान एकल न्यायाधीश ने ***एशियन रीसर्फेसिंग ऑफ रोड एजेंसी प्राइवेट लिमिटेड और अन्य बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो: 2018 (2) पीएलजेआर 329 (एससी)*** पर भरोसा किया, जिसमें निम्नानुसार यह माना गया था:-

"20. यह देखा गया कि धारा 482 द.प्र.स के तहत शक्ति का प्रयोग केवल दुर्लभतम मामलों में ही किया जा सकता है, अन्यथा नहीं:

38. दंड प्रक्रिया संहिता निस्संदेह अपने आप में एक पूर्ण संहिता है। जैसा कि हम पहले ही चर्चा कर चुके हैं, धारा 397(2) द.प्र.स के तहत विवेकाधीन अधिकार क्षेत्र का प्रयोग केवल अंतिम आदेशों और मध्यवर्ती आदेशों के संबंध में किया जाना है। धारा 482 द.प्र.स के तहत शक्ति का प्रयोग केवल दंड प्रक्रिया संहिता के तहत पारित आदेश को प्रभावी बनाने या किसी अदालत की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए मध्यवर्ती आदेशों के संबंध में किया जाना है। ***जैसा कि ऊपर बताया गया है, इस शक्ति का प्रयोग केवल दुर्लभतम मामलों में ही किया जाना चाहिए, अन्यथा नहीं। यदि स्थिति ऐसी है, और हमारा विचार है कि ऐसा ही है, तो संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 का सहारा लेना शायद केवल अत्यंत असाधारण मामले में ही अनुमेय होगा।*** *उच्च न्यायालय के संवैधानिक अधिकार क्षेत्र का आह्वान करना, जब दंड प्रक्रिया संहिता अभियुक्त व्यक्ति के लाभ के लिए निष्पक्ष और शीघ्र सुनवाई के हित में इसे प्रतिबंधित करती है,* ***हमें यह प्रस्ताव स्वीकार करना कठिन लगता है कि चूंकि संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 अभियुक्त व्यक्ति के लिए उपलब्ध हैं, इसलिए इन प्रावधानों का सहारा उन मामलों में लिया जाना चाहिए जो दुर्लभतम नहीं हैं, बल्कि तुच्छ मुद्दों के लिए हैं।***

.....

.....

*23. हम **रतिलाल भांजी मिठानी बनाम असिस्टेंट कलेक्टर ऑफ कस्टम्स, बॉम्बे और अन्य** में उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति की प्रकृति के बारे में संविधान पीठ की टिप्पणियों का भी उल्लेख कर सकते हैं:*

"दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 561-ए द्वारा संरक्षित उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियाँ इस प्रकार अनुच्छेद 21 के अर्थ में "कानून" द्वारा उसमें निहित हैं। अंतर्निहित शक्तियों को लागू करने की प्रक्रिया उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमों द्वारा विनियमित होती है। ऐसे नियम बनाने की शक्ति संविधान द्वारा उच्च न्यायालय को प्रदान की गई है। पहले लागू नियमों को संविधान के अनुच्छेद 372 द्वारा लागू रखा गया था।"

*24. जैसा कि विवादित निर्णय में सही उल्लेख किया गया है, **एल. चंद्र कुमार (ऊपर)** मामले में सात न्यायाधीशों की पीठ ने माना कि अनुच्छेद 227 के तहत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने की उच्च न्यायालय की शक्ति संविधान की मूल संरचना का हिस्सा थी।*

*25. इस प्रकार, भले ही विभिन्न परिस्थितियों से निपटने में, यह मानते हुए कि आरोप तय करने वाला आदेश अंतरिम आदेश था और धारा 397(2) या यहां तक कि धारा 482 द.प्र.स के तहत हस्तक्षेप करने योग्य नहीं था, परस्पर विरोधी टिप्पणियां की गई हों, **मधु लिमये (ऊपर)** में निर्धारित सिद्धांत अभी भी लागू है। आरोप तय करने वाले आदेश को पूरी तरह से अंतरिम आदेश नहीं माना जा सकता है और किसी भी स्थिति में धारा 397(2) द.प्र.स या 482 द.प्र.स या संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत हस्तक्षेप किया जा सकता है जो एक संवैधानिक प्रावधान है लेकिन आरोप तय करने वाले आदेश में हस्तक्षेप करने और स्थगन*

देने की उच्च न्यायालय की शक्ति का प्रयोग केवल असाधारण स्थिति में ही किया जाना है।

26. इस प्रकार हमें यह निष्कर्ष निकालने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि उच्च न्यायालय के पास उचित मामले में आरोप तय करने के आदेश के खिलाफ चुनौती पर विचार करने और स्थगन देने का अधिकार है, लेकिन इस तरह की शक्ति का प्रयोग कैसे किया जाना चाहिए और कब स्थगन दिया जाना चाहिए, इस पर आगे विचार करने की आवश्यकता है।"

8. यह मुद्दा इस न्यायालय की खंडपीठ के समक्ष आया, जहां यह पाया गया कि पारिवारिक न्यायालय द्वारा धारा 125 द.प्र.स के दूसरे प्रावधान के तहत अंतरिम भरण-पोषण के लिए दिया गया आदेश सख्ती से अंतरिम आदेश नहीं हो सकता, बल्कि एक मध्यवर्ती आदेश हो सकता है, जिसे संशोधित किया जा सकता है।

9. इस प्रकार, डिवीजन बेंच ने एक बड़ी बेंच द्वारा निर्धारित किए जाने वाले निम्नलिखित दो प्रश्न तैयार किए:-

i. क्या दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 के दूसरे परंतुक के अंतर्गत पारित अंतरिम भरण-पोषण आदेश एक अंतरिम आदेश है या एक मध्यवर्ती आदेश?

ii. यदि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 के दूसरे परंतुक के अंतर्गत पारित अंतरिम भरण-पोषण आदेश एक मध्यवर्ती आदेश है, तो क्या उक्त आदेश के विरुद्ध पारिवारिक न्यायालय अधिनियम की धारा 19(4) के अंतर्गत पुनरीक्षण अनुरक्षणीय है?

10. हमने द.प्र.स, 1973 के अध्याय IX में निहित प्रावधानों और 1984 के अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों की जांच की है।

11. धारा 125 द.प्र.स में यह प्रावधान है कि यदि कोई व्यक्ति जिसके पास पर्याप्त साधन हैं, अपनी पत्नी, जो स्वयं अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ है, या अपने वैध या नाजायज नाबालिग बच्चे, चाहे वह विवाहित हो या नहीं, या ऐसी संतान विवाहित पुत्री न होने की स्थिति में, जो वयस्क हो गई है, का भरण-पोषण करने में उपेक्षा करता है या इनकार करता है, जहां ऐसा बच्चा किसी शारीरिक या मानसिक असामान्यता या चोट के कारण स्वयं अपना या अपने पिता या माता का भरण-पोषण करने में असमर्थ है, जो स्वयं अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ हैं, तो प्रथम श्रेणी का मजिस्ट्रेट ऐसी उपेक्षा या इनकार के सबूत पर ऐसे व्यक्ति को अपनी पत्नी या ऐसे बच्चे, पिता या माता के भरण-पोषण के लिए मासिक भत्ता देने का आदेश दे सकता है, जो मजिस्ट्रेट उचित समझे।

12. धारा 125 द.प्र.स के पहले प्रावधान में आगे कहा गया है कि मजिस्ट्रेट किसी नाबालिग लड़की के पिता को उसके वयस्क होने तक ऐसा भत्ता देने का आदेश दे सकता है, यदि मजिस्ट्रेट को यह विश्वास हो कि ऐसी नाबालिग लड़की का पति, यदि विवाहित है, पर्याप्त साधन संपन्न नहीं है।

13. धारा 125 का दूसरा प्रावधान यह भी घोषित करता है कि भरण-पोषण के लिए मासिक भत्ते से संबंधित कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान मजिस्ट्रेट ऐसे व्यक्ति को अपनी पत्नी या ऐसे बच्चे, पिता या माता के अंतरिम भरण-पोषण के लिए मासिक भत्ता देने का आदेश दे सकता है और ऐसी कार्यवाही के खर्च, जिसे मजिस्ट्रेट उचित समझे, और उसे ऐसे व्यक्ति को देने का आदेश दे सकता है, जैसा मजिस्ट्रेट समय-समय पर निर्देश दे। अंतरिम भरण-पोषण के लिए ऐसे आवेदन पर निर्णय लेने की बाहरी समय-

सीमा ऐसे व्यक्ति को आवेदन की सूचना देने की तिथि से साठ दिन निर्धारित की गई थी।

14. धारा 126 द.प्र.स धारा 125 द.प्र.स के तहत कार्यवाही के लिए अपनाई जाने वाली प्रक्रिया का प्रावधान करती है। धारा 127 भरण-पोषण या अंतरिम भरण-पोषण के लिए मासिक भत्ता प्राप्त करने वाले किसी भी व्यक्ति की परिस्थितियों में परिवर्तन के सबूत पर भत्ते में परिवर्तन की अनुमति देती है। और धारा 128 द.प्र.स भरण-पोषण के ऐसे आदेश के प्रवर्तन के लिए तंत्र का प्रावधान करती है।

15. धारा 125 द.प्र.स में दूसरा प्रावधान, जो मजिस्ट्रेट को अंतरिम भरण-पोषण के लिए आदेश देने का अधिकार देता है, 2001 के अधिनियम 50 द्वारा 24.09.2001 से जोड़ा गया था।

16. धारा 125 द.प्र.स में पूर्वोक्त संशोधन से पहले, धारा ने मजिस्ट्रेट को भरण-पोषण का अंतरिम आदेश पारित करने के लिए स्पष्ट रूप से सशक्त नहीं किया था; हालांकि ऐसे आदेश पारित करने के लिए अधिकार क्षेत्र की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने माना था कि मजिस्ट्रेट के पास अंतरिम भरण-पोषण का ऐसा आदेश देने की निहित शक्तियां थीं। [संदर्भ ***सावित्री बनाम गोविंद सिंह रावत: 1985 (4) एससीसी 337***]।

17. उपर्युक्त निर्णय इस सिद्धांत पर आधारित था कि जब कोई वस्तु अनुदत्त होती है तब वह भी अनुदत्त हो जाती है जिसके बिना अनुदत्त वस्तु का अस्तित्व नहीं हो सकता [*यूबी ए लिक्विड कॉन्सेडिटुर, कॉन्सेडिटुर एट आइड सिनेक्वो रेस इप्सा एसे नॉन प्रोटेस्ट*]। जब भी कानून द्वारा कुछ करने की आवश्यकता होती है और ऐसा करना असंभव पाया जाता है जब तक कि स्पष्ट शर्तों में अधिकृत न किया गया कुछ भी न किया जाए, तो उस चीज

को आवश्यक इरादे से पूरा किया जाएगा। ऐसा निर्माण केवल विचाराधीन विधान के उद्देश्य को आगे बढ़ाएगा। किसी भी विपरीत दृष्टिकोण के परिणामस्वरूप आवेदक को गंभीर कठिनाई होगी, जिसके पास अंतिम आदेश पारित होने तक अस्तित्व में रहने का कोई साधन नहीं हो सकता है।

18. संसद ने इस मामले पर समग्र दृष्टिकोण रखते हुए कि आवेदक को संक्षिप्त प्रकृति की कार्यवाही में भी राहत पाने के लिए कई वर्षों तक इंतजार करना पड़ सकता है, धारा 125 द.प्र.स में संशोधन किया और मजिस्ट्रेट को उसकी संतुष्टि पर अंतरिम भरण-पोषण देने की शक्ति प्रदान करते हुए दूसरा प्रावधान लाया।

19. द.प्र.स में इस तरह के संशोधन से पहले, 1984 का अधिनियम विवाह और पारिवारिक मामलों से संबंधित विवादों के त्वरित निपटारे और सुलह को बढ़ावा देने के उद्देश्य से पारिवारिक न्यायालयों की स्थापना के लिए अधिनियमित किया गया था।

20. 1984 के अधिनियम की धारा 7 में पारिवारिक न्यायालयों की स्थापना और पारिवारिक न्यायालय में न्यायाधीशों की नियुक्ति का प्रावधान है। ऐसे पारिवारिक न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र के संबंध में, इसमें अन्य बातों के साथ-साथ यह प्रावधान है कि पारिवारिक न्यायालय को किसी भी जिला न्यायालय या किसी अधीनस्थ सिविल न्यायालय द्वारा वर्तमान में लागू किसी भी कानून के तहत निम्नलिखित के संबंध में प्रयोग किए जाने योग्य अधिकार क्षेत्र प्राप्त होगा:

i. विवाह की अमान्यता या वैवाहिक अधिकारों की पुनर्स्थापना या न्यायिक दमन या विवाह के विघटन के लिए विवाह के पक्षकारों के बीच मुकदमा या कार्यवाही; और

ii. किसी व्यक्ति की विवाह की वैधता या वैवाहिक स्थिति की घोषणा के लिए वाद या कार्यवाही और भरण-पोषण के लिए वाद या कार्यवाही।

21. अधिकार क्षेत्र अन्य पहलुओं जैसे संरक्षकता, हिरासत, बच्चों तक पहुंच आदि तक भी विस्तारित है।

22. 1984 के अधिनियम की धारा 8, एक बहिष्करणीय प्रावधान है, जिसमें प्रावधान है कि पारिवारिक न्यायालय को छोड़कर कोई अन्य न्यायालय इन मामलों में कोई अधिकार क्षेत्र का प्रयोग नहीं करेगा, जहां किसी क्षेत्र के लिए पारिवारिक न्यायालय स्थापित किया गया है।

23. पारिवारिक न्यायालय द्वारा अपनाई जाने वाली प्रक्रिया के संबंध में, 1984 के अधिनियम की धारा 10 में निम्नानुसार प्रावधान है:-

> *"10. सामान्यतः प्रक्रिया.-(1) इस अधिनियम और नियमों के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) और किसी अन्य समय प्रवृत्त कानून के उपबंध पारिवारिक न्यायालय के समक्ष [दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अध्याय IX के अधीन कार्यवाही के अलावा] मुकदमों और कार्यवाहियों पर लागू होंगे और संहिता के उक्त उपबंधों के प्रयोजनों के लिए पारिवारिक न्यायालय को सिविल न्यायालय माना जाएगा और उसे ऐसे न्यायालय की सभी शक्तियां प्राप्त होंगी।*
>
> *(2) <u>इस अधिनियम और नियमों के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) या उसके अधीन बनाए गए नियमों के उपबंध, पारिवारिक न्यायालय के समक्ष उस संहिता के अध्याय IX के अधीन कार्यवाहियों पर लागू होंगे</u>।*

(3) उपधारा (1) या उपधारा (2) में कोई भी बात पारिवारिक न्यायालय को वाद या कार्यवाही की विषय-वस्तु के संबंध में या एक पक्ष द्वारा आरोपित और दूसरे पक्ष द्वारा अस्वीकृत तथ्यों की सत्यता के संबंध में समझौता करने के लिए अपनी स्वयं की प्रक्रिया निर्धारित करने से नहीं रोकेगी।

(जोर दिया गया)

24. 1984 के अधिनियम के अध्याय V के अंतर्गत धारा 19, जिसमें अपील और संशोधन का प्रावधान है, को तत्काल संदर्भ के लिए और साथ ही पूर्णता के लिए उद्धृत किया जा रहा है क्योंकि यह आगे की चर्चाओं का केंद्र होगा:-

अध्याय V

[अपील और पुनरीक्षण]

19. अपील.-- *(1) उपधारा (2) में दिए गए प्रावधान के सिवाय और सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) या दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) या किसी अन्य कानून में निहित किसी बात के बावजूद, पारिवारिक न्यायालय के प्रत्येक निर्णय या आदेश से, जो अंतरिम आदेश नहीं है, तथ्यों और कानून दोनों के आधार पर उच्च न्यायालय में अपील की जा सकेगी।*

(2) परिवार न्यायालय द्वारा पक्षकारों की सहमति से पारित डिक्री या आदेश [या दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अध्याय IX के अंतर्गत पारित आदेश] के विरुद्ध कोई अपील नहीं होगी:

बशर्ते कि इस उपधारा की कोई बात उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित किसी अपील या पारिवारिक न्यायालय (संशोधन) अधिनियम, 1991 के प्रारंभ होने से

पूर्व दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अध्याय IX के अंतर्गत पारित किसी आदेश पर लागू नहीं होगी।]

(3) इस धारा के अंतर्गत प्रत्येक अपील पारिवारिक न्यायालय के निर्णय या आदेश की तिथि से तीस दिन की अवधि के भीतर प्रस्तुत की जाएगी।

[(4) उच्च न्यायालय स्वप्रेरणा से या अन्यथा किसी कार्यवाही का अभिलेख मंगा सकता है और उसकी जांच कर सकता है, जिसमें पारिवारिक न्यायालय ने अपने अधिकार क्षेत्र में दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अध्याय IX के अंतर्गत आदेश पारित किया हो, ताकि वह आदेश की शुद्धता, वैधता या औचित्य के बारे में स्वयं को संतुष्ट कर सके, जो कि अंतरिम आदेश नहीं है, और ऐसी कार्यवाही की नियमितता के बारे में भी।]

[(5)] पूर्वोक्त के अलावा, किसी पारिवारिक न्यायालय के किसी निर्णय, आदेश या डिक्री के विरुद्ध किसी न्यायालय में कोई अपील या पुनरीक्षण नहीं किया जा सकेगा।

[(6)] उपधारा (1) के अधीन प्रस्तुत अपील की सुनवाई दो या अधिक न्यायाधीशों वाली पीठ द्वारा की जाएगी।

25. विविध प्रावधानों से निपटने के लिए, 1984 के अधिनियम की धारा 20 में यह घोषित किया गया है कि अधिनियम के प्रावधान, वर्तमान में लागू किसी अन्य कानून या परिवार न्यायालय अधिनियम के अलावा किसी अन्य कानून के आधार पर प्रभावी किसी भी साधन में निहित किसी भी असंगत बात के बावजूद प्रभावी होंगे।

26. अंतरिम भरण-पोषण के आदेश के विरुद्ध अपील नहीं की जा सकती, क्योंकि अधिनियम 1984 की धारा 19 (1) और (2) में निहित प्रावधान हैं, जो यह प्रावधान करते हैं कि द.प्र.स के अध्याय IX के अंतर्गत

पारित आदेश के विरुद्ध कोई अपील नहीं की जा सकती, जिसमें संहिता की धारा 125 से 128 शामिल हैं। अधिनियम की धारा 19 (2) के प्रावधान में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि धारा 19 (2) में कुछ भी उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित किसी अपील या पारिवारिक न्यायालय अधिनियम, 1991 के प्रारंभ से पहले द.प्र.स के अध्याय IX के अंतर्गत पारित किसी आदेश पर लागू नहीं होगा।

27. क्या इसका मतलब यह है कि यदि कोई मजिस्ट्रेट धारा 125 द.प्र.स के दूसरे प्रावधान के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए अंतरिम भरण-पोषण प्रदान करता है, तो उसे चुनौती देने के लिए कोई मंच नहीं होगा?

28. 1984 के अधिनियम की धारा 19 (4) एक उपाय प्रदान करती है, अर्थात, उच्च न्यायालय स्वप्रेरणा से या अन्यथा, किसी भी कार्यवाही के रिकॉर्ड की जांच करने के लिए कह सकता है जिसमें पारिवारिक न्यायालय, अपने अधिकार क्षेत्र में स्थित है, द.प्र.स के अध्याय IX के तहत एक आदेश पारित किया है, ताकि आदेश की शुद्धता, वैधता या औचित्य के बारे में खुद को संतुष्ट किया जा सके, जो कि एक अंतरिम आदेश नहीं है (जोर दिया गया है), और ऐसी कार्यवाही की नियमितता के बारे में। धारा 19 के तहत प्रदान की गई बातों को छोड़कर, पारिवारिक न्यायालय के किसी भी निर्णय, आदेश या डिक्री से किसी भी न्यायालय में कोई अपील या संशोधन नहीं किया जा सकता है।

29. यहां संदर्भित पीठ द्वारा तैयार किए गए प्रश्न का उत्तर दिया जाना आवश्यक है।

30. यदि अंतरिम भरण-पोषण के आदेश को अंतरिम आदेश माना जाता है, तो 1984 के अधिनियम की धारा 19 (4) के तहत कोई संशोधन नहीं किया जा सकेगा। इस पहेली ने देश भर के उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों को परेशान किया और विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा अलग-अलग विचार व्यक्त किए गए।

31. दिल्ली उच्च न्यायालय ने ***मनीष अग्रवाल बनाम सीमा अग्रवाल एवं अन्य: 2012 एससीसी ऑनलाइन डीईएल 4816*** में विभिन्न उच्च न्यायालयों की भिन्न-भिन्न राय पर विचार किया और यह व्याख्या करना उचित समझा कि क्या द.प्र.स की धारा 125 के दूसरे प्रावधान के तहत अंतरिम भरण-पोषण का आदेश एक अंतरिम आदेश है, जो इसे अपरिवर्तनीय बनाता है।

32. शाह बाबूलाल खिमजी बनाम जयाबेन डी. कनिया एवं अन्य: (1981) 4 एससीसी 8 में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा था कि एक आदेश या यहां तक कि एक अंतरिम आदेश को निर्णय कहा जा सकता है, जब उसमें अंतिमता जोड़ने का गुण हो। सर्वोच्च न्यायालय ने निर्धारित किया कि निर्णय तीन प्रकार के हो सकते हैं, अर्थात, एक अंतिम निर्णय जो विवाद के सभी प्रश्नों या मुद्दों का निर्णय करता है; एक प्रारंभिक निर्णय जो दो स्वरूपों में हो सकता है, अर्थात्:- (i) जहां परीक्षण न्यायाधीश किसी आदेश द्वारा मुकदमे को गुण-दोष में जाए बिना, लेकिन केवल प्रतिवादी या विरोध करने वाले पक्ष द्वारा इस आधार पर उठाई गई प्रारंभिक आपत्ति पर खारिज कर देता है कि मुकदमा बनाए रखने योग्य नहीं है, ऐसी स्थिति में भी मुकदमे का अंतिम रूप से एक या दूसरे तरीके से फैसला किया जाता है; और (ii) जहां परीक्षण न्यायाधीश प्रतिवादी द्वारा मुकदमे की रखरखावीयता से संबंधित प्रारंभिक आपत्ति, जैसे

अधिकार क्षेत्र का निषेध, को सुनने के बाद आदेश पारित करता है; रिस जुडिकाटा; मुकदमे में स्पष्ट दोष; धारा 80 के तहत नोटिस का अभाव आदि। ट्रायल कोर्ट के ये फैसले उस मुकदमे को समाप्त नहीं करेंगे, जिस पर अभी गुण-दोष के आधार पर सुनवाई होनी है। हालांकि, ट्रायल जज द्वारा आपत्तियों को खारिज करने से निस्संदेह प्रतिवादी के मूल्यवान अधिकार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, जो, यदि उसकी आपत्तियां वैध हैं, तो प्रारंभिक आधार पर मुकदमे को खारिज करवाने का हकदार है।

33. इस प्रकार, ऐसा आदेश, भले ही यह मुकदमे को जीवित रखता है, निस्संदेह मुकदमे के एक महत्वपूर्ण पहलू का फैसला करता है जो प्रतिवादी के महत्वपूर्ण अधिकार को प्रभावित करता है और इसलिए इसे एक निर्णय के रूप में समझा जाना चाहिए ताकि एक बड़ी बेंच के समक्ष अपील की जा सके।

34. एक मध्यस्थ या अंतरिम निर्णय जो अंतरिम आदेश हैं, जिनमें सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 43 नियम 1 के खंड ए से डब्ल्यू में स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट अंतिमता की गुणवत्ता शामिल है, जिन्हें लेटर्स पेटेंट के अर्थ में निर्णय माना जाता है और इसलिए, अपील योग्य हैं। ऐसे अंतरिम आदेश भी हो सकते हैं जो आदेश 43 नियम 1 के अंतर्गत नहीं आते हैं, लेकिन जिनमें अंतिमता की विशेषताएं होती हैं, क्योंकि वे आदेश पक्ष के किसी मूल्यवान अधिकार को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर सकते हैं या सहायक कार्यवाही में मुकदमे के किसी महत्वपूर्ण पहलू का फैसला कर सकते हैं।

35. इस व्यापक वर्गीकरण के आधार पर, इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ ने ***श्रीमती किरण बाला श्रीवास्तव बनाम जय प्रकाश श्रीवास्तव: 2005 (23) एलसीडी 1*** में हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 (जिसे

आगे एचएम अधिनियम कहा जाएगा) की धारा 24 में निहित प्रावधान से निपटते हुए एचएम अधिनियम के तहत रखरखाव के आदेश के महत्व को स्वीकार किया। रखरखाव देने से इनकार करना, या अपर्याप्त रखरखाव देना, पति या पत्नी (आमतौर पर पत्नी) के लिए एक गंभीर परिणाम होगा क्योंकि इसका परिणाम यह हो सकता है कि वह खुद का बचाव करने या पर्याप्त साधनों की कमी के कारण मूल कार्यवाही पर मुकदमा चलाने का विचार छोड़ दे। इसी तरह, एचएम अधिनियम की धारा 24 के तहत दी गई राशि का भुगतान न करने पर संबंधित पक्ष को बचाव से बाहर निकलने या उसके मामले को खारिज करने के परिणाम का सामना करना पड़ सकता है।

36. आकांक्षा श्रीवास्तव बनाम वीरेंद्र श्रीवास्तव एवं अन्य : 2010 (3) एमपीएलजे 151 (मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ का निर्णय) में, यह मुद्दा उठा कि क्या अंतरिम भरण-पोषण के आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण याचिका दायर की जा सकती है। यह माना गया कि धारा 125 सीआरपीसी के तहत अंतरिम भरण-पोषण का आदेश एक मध्यवर्ती या अर्ध-अंतिम आदेश था। अमर नाथ बनाम हरियाणा राज्य : (1977) 4 एससीसी 137 के निर्णय पर भरोसा करते हुए, यह माना गया कि एक आदेश जो अभियुक्त के अधिकारों को मूलतः प्रभावित करता है और पक्षकारों के कुछ अधिकारों का निर्धारण करता है, उसे मध्यवर्ती आदेश नहीं माना जाना चाहिए ताकि उसे असंशोधनीय बनाया जा सके। इसे गवाहों को बुलाने; मामलों को स्थगित करने; जमानत के आदेश पारित करने;रिपोर्ट मंगवाने और लंबित कार्यवाही में सहायता के लिए ऐसे अन्य कदमों जैसे आदेशों के समान नहीं माना जा सकता। केवल पूर्वोक्त आदेशों जैसे आदेश ही अंतरिम आदेश माने जाएँगे, जिनके विरुद्ध कोई संशोधन सीआरपीसी की धारा 397 (2) और 1984

के अधिनियम की धारा 19 (4) के अंतर्गत मान्य नहीं होगा। यह स्पष्ट रूप से माना गया कि सीआरपीसी की धारा 125 के अंतर्गत अंतरिम भरण-पोषण का आदेश एक ऐसा आदेश है जो "क्षणिक मामले" का निर्णय करता है।

37. इस तरह के अंतरिम भरण-पोषण के आदेश को अंतरिम आदेश न मानने का दूसरा कारण यह था कि अंतरिम भरण-पोषण के लिए आवेदन करने पर एक अलग कार्यवाही शुरू हो जाती है, जिसका निपटारा मुख्य मामले के अंतिम आदेश से बहुत पहले हो जाता है। धारा 125 सीआरपीसी के दूसरे प्रावधान के तहत अंतरिम भरण-पोषण के मुद्दे पर, मामला अंततः मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश द्वारा तय होता है और इसलिए, इन्हें अधिकतम मध्यवर्ती या अर्ध-अंतिम आदेश कहा जा सकता है। ऐसा आदेश मुख्य विवाद का अंत नहीं कर सकता, लेकिन यह मुद्दे के मुद्दे को निर्णायक रूप से तय करता है। ऐसे आदेशों को अंतरिम आदेश मानने से न्याय विचलित ही होगा।

38. अन्य उच्च न्यायालयों के भी इसी तरह के विचारमधु लिमये बनाम महाराष्ट्र राज्य: (1977) 4 एससीसी 551 में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर आधारित थे जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने माना था कि सामान्यतः और सामान्यतः, मध्यवर्ती आदेश शब्द को अंतिम आदेश शब्द के विपरीत समझा और लिया जाता है; लेकिन "जो अंतिम आदेश नहीं है वह एक मध्यवर्ती आदेश होना चाहिए" सिद्धांत की व्याख्या और सार्वभौमिक अनुप्रयोग न तो आवश्यक है और न ही उचित है।

39. इसी प्रकार ***वी.सी. शुक्ला बनाम राज्य: 1980 (2) एससीआर 380*** में, सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि द.प्र.स में प्रयुक्त शब्द "मध्यवर्ती आदेश" को अभियुक्त के पक्ष में बहुत उदार निर्माण दिया जाना चाहिए ताकि परीक्षण

की पूर्ण निष्पक्षता सुनिश्चित की जा सके और यदि आदेश पूरी तरह से मध्यवर्ती या अर्ध-अंतिम नहीं था, तो पुनरीक्षण शक्ति आकर्षित हो सकती है।

40. इस मुद्दे पर अलग-अलग दृष्टिकोण रखने वाले उच्च न्यायालयों, जैसे बॉम्बे, राजस्थान, कर्नाटक और उड़ीसा ने ***शाह बाबूलाल खिमजी (ऊपर)*** में दिए गए फैसले को अलग करते हुए कहा कि इस मामले में सर्वोच्च न्यायालय लेटर्स पेटेंट के तहत अपील के दायरे की जांच कर रहा था और इसी संदर्भ में अभिव्यक्ति के फैसले पर चर्चा की गई और उसे बहुत व्यापक अर्थ दिया गया। पारिवारिक न्यायालय अधिनियम, 1984 की एक अलग योजना है और 'निर्णय' शब्द का कोई व्यापक अर्थ देना और इसमें अंतरिम आदेश भी शामिल करना उचित नहीं होगा।

41. इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने, इस मामले को प्रथम बार खण्डपीठ को संदर्भित करते समय, संभवतः यह विचार किया था कि धारा 482 द.प्र.स के फोरम पर कोई सीधा प्रतिबंध नहीं लगाया जा सकता है अथवा अंतरिम भरण-पोषण के आदेश के विरुद्ध एकमात्र फोरम भारत के संविधान का अनुच्छेद 227 होगा।

42. पटना उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा ***मोहम्मद अकील अहमद (ऊपर)*** के मामले में धारा 482 द.प्र.स को लागू न करने का कारण संभवतः 1984 के अधिनियम की धारा 10 के तहत यह अधिदेश था कि द.प्र.स के प्रावधान या उसके तहत बनाए गए नियम केवल पारिवारिक न्यायालय के समक्ष संहिता के अध्याय IX के तहत कार्यवाही पर लागू होंगे।

43. हमें इस प्रस्ताव को स्वीकार करने में बहुत आपत्ति है क्योंकि विशेष प्रावधान केवल पारिवारिक न्यायालयों के समक्ष सीमित आवेदन के नहीं हो सकते हैं और उच्च न्यायालयों के समक्ष नहीं। फिर भी जब

अंतरिम भरण-पोषण देने वाले आदेश को शब्द के सटीक अर्थ में अंतरिम नहीं माना जाता है और पारिवारिक न्यायालय अधिनियम, 1984 के तहत एक प्रावधान है, अर्थात धारा 19 (4), जो ट्रिगर हो सकता है, तो यह ऐसे आदेश को चुनौती देने के लिए धारा 482 द.प्र.स जैसे किसी अन्य मंच की तलाश करने की आवश्यकता को समाप्त कर देगा।

44. यह समझना अधिक सुविधाजनक होगा कि हम किस कारण से पूरी तरह सहमत हैं, कि क्यों रेफरिंग बेंच ने ***मोहम्मद अकील अहमद (ऊपर)*** के मामले पर पुनर्विचार करने के लिए कहा, इसके लिए नीचे दिए गए रेफरल आदेश से कुछ पैराग्राफ उद्धृत किए जा रहे हैं:-

> *"**27.** निस्संदेह, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के दूसरे परंतुक के अंतर्गत अंतरिम आदेश दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125(1) के अंतर्गत दायर याचिका के लंबित रहने के दौरान पारित किया जाता है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के दूसरे परंतुक को आवेदक को तत्काल राहत देने के लिए विधि-पुस्तक में लाया गया है, लेकिन अंतरिम आदेश, निस्संदेह, संबंधित पक्षों के अधिकारों और दायित्वों का निर्णय करता है। निस्संदेह, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अंतर्गत अंतरिम आदेश पारित करने से पहले आवेदक के दावे के औपचारिक प्रमाण की आवश्यकता नहीं है, लेकिन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के दूसरे परंतुक के अंतर्गत पारित अंतरिम भरण-पोषण आदेश, प्रथम दृष्टया, पक्षों के अधिकारों और दायित्वों का निर्णय करता है। इसके अलावा, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के दूसरे परंतुक के अंतर्गत पारित अंतरिम भरण-पोषण आदेश, प्रथम दृष्टया, पक्षों के अधिकारों और दायित्वों का निर्णय करता है। समय-समय पर इसमें बदलाव किया जा सकता है। इसी तरह, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125(1) के तहत पारित आदेश में भी बाद के चरण में बदलाव किया जा सकता है, अगर परिस्थिति की मांग हो।*

28. *इसके अलावा, मैं पाता हूं कि यदि कोई व्यक्ति जिसके खिलाफ अंतरिम भरण-पोषण का आदेश पारित किया गया है, न्यायालय के आदेश का पालन करने में पर्याप्त कारण के बिना विफल रहता है, तो उसके खिलाफ बलपूर्वक कदम उठाए जा सकते हैं। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के दूसरे परंतुक के तहत पारित आदेश पहली नजर में एक अंतरिम आदेश प्रतीत होता है, लेकिन क्या सही मायने में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के दूसरे परंतुक के तहत पारित आदेश एक अंतरिम आदेश है या नहीं, यह देखा जाना चाहिए।*

29. *दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 127 न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125(1) अथवा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के द्वितीय परंतुक के अंतर्गत पारित आदेश को परिवर्तित करने की शक्ति प्रदान करती है, अतः दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 127 के अनुसार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125(1) के अंतर्गत पारित आदेश भी अंतिम आदेश नहीं है तथा परिस्थितियों के परिवर्तन की मांग होने पर उस आदेश को बाद में परिवर्तित किया जा सकता है। इसी प्रकार की स्थिति दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के दूसरे परंतुक के संबंध में भी है, क्योंकि अंतरिम भरण-पोषण के आदेश को कार्यवाही के बाद के चरण में भी बदला जा सकता है, इसलिए यह स्पष्ट है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125(1) के तहत पारित या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के दूसरे परंतुक के तहत पारित दोनों आदेशों की प्रकृति काफी हद तक समान है, क्योंकि दोनों आदेशों को बाद के चरण में बदला जा सकता है। पारिवारिक न्यायालय अधिनियम की धारा 19(4) विशेष रूप से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के दूसरे परंतुक के तहत पारित आदेश के खिलाफ पुनरीक्षण पर रोक नहीं लगाती है और एकमात्र प्रतिबंध पारिवारिक न्यायालय अधिनियम की धारा 19(4) के प्रावधान का लाभ उठाना है कि चुनौती में आदेश अंतरिम आदेश नहीं होना चाहिए। अतः उपरोक्त परिस्थिति में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के दूसरे परंतुक के अंतर्गत पारित अंतरिम भरण-*

पोषण के आदेश की प्रकृति एक मध्यवर्ती आदेश प्रतीत होती है तथा पारिवारिक न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 19(4) केवल अंतरिम आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण पर रोक लगाती है, मध्यवर्ती आदेश के विरुद्ध नहीं।

30. *जैसा कि मैंने पहले ही देखा है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 का दूसरा परंतुक मध्यवर्ती आदेश की श्रेणी में आता है, इसलिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के दूसरे परंतुक के अंतर्गत पारित अंतरिम भरण-पोषण आदेश को पारिवारिक न्यायालय अधिनियम की धारा 19(4) के अंतर्गत संशोधित किया जा सकता है।*

31. *हालांकि, यहां यह ध्यान रखना उचित है कि इस न्यायालय की विद्वान खंडपीठ ने* ***मोहम्मद अकील अहमद (ऊपर)*** *मामले में उपरोक्त पहलू पर विचार नहीं किया और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के दूसरे प्रावधान के तहत पारित आदेश को अंतरिम आदेश मानते हुए इस निष्कर्ष पर पहुंची कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के दूसरे प्रावधान के तहत पारित अंतरिम भरण-पोषण आदेश के खिलाफ पारिवारिक न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 19(4) के तहत संशोधन स्वीकार्य नहीं है। इसलिए, मेरे विचार में,* ***मोहम्मद अकील अहमद (ऊपर)*** *मामले में इस न्यायालय की विद्वान खंडपीठ द्वारा दी गई उपरोक्त टिप्पणी पर एक बड़ी पीठ द्वारा पुनर्विचार किए जाने की आवश्यकता है।*

45. इस प्रकार हमारा यह सुविचारित मत है कि अंतरिम भरण-पोषण का आदेश, उस समय के मुद्दे पर अंतिम रूप से निर्णय करने वाला आदेश है, जो कि, सख्त अर्थों में, एक अंतरिम आदेश नहीं है, बल्कि एक मध्यवर्ती आदेश है, जिसके विरुद्ध ऐसे आदेश के विरुद्ध संशोधन करने पर कोई प्रतिबंध लागू नहीं होगा।

46. इस प्रकार, प्रश्नों के उत्तर इस प्रकार हैं:-

i. धारा 125 दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के दूसरे प्रावधान के तहत अंतरिम भरण–पोषण का आदेश एक "अंतवर्ती आदेश" नहीं है, बल्कि एक "माध्यमिक/अर्ध–अंतिम आदेश" है; और

ii. आपराधिक पुनरीक्षण का उपाय पारिवारिक न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 19 की उपधारा (4) के अंतर्गत दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 से 128 के अंतर्गत अंतरिम और अंतिम आदेश दोनों के रूप में उपलब्ध होगा।

47. संदर्भ का उत्तर तदनुसार दिया गया है।

(आशुतोष कुमार, न्यायमूर्ति)

मोहित कुमार शाह, न्यायमूर्ति : मैं सहमत हूँ

(मोहित कुमार शाह, न्यायमूर्ति)

हरीश कुमार, जे : मैं सहमत हूँ

(हरीश कुमार, न्यायमूर्ति)

प्रवीण-II/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।